Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 11, Issue 01, January-June, 2023
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org

कुल्लू जनपद की देव-परम्पराओं का अनछुआ पहलू

DR. THAKUR SEN

Assistant Professor, Music (Instrumental), Govt. Degree College, Kullu, Himachal Pradesh

सारांश

समाज के विकास में सभी वर्गों का योगदान अवश्य रहता है और किसी समाज के विकास के लिए यह आवश्यक भी है। भारत का इतिहास बहुत ही समृद्ध रहा है और इसे समृद्ध बनाने में कई पीढ़ियों का योगदान रहा है। उसी प्रकार सांस्कृतिक रूप से समृद्ध हिमाचल प्रदेश के कुल्लू जनपद की देव-परम्पराओं की बात की जाए तो ये संगीत से भरपूर हैं और अनेक देव-वाद्यों का वादन यहां देवताओं के लिए किया जाता है और देव-तालों पर देवताओं की हर क्रिया होती है। हर ताल का वादन देवता की विशेष स्थिति में ही किया जाता है। ध्यान से देखने पर ज्ञात होता है कि इन देव तालों के बोल पूर्णतः शास्त्रीय संगीत के तालों की तरह निश्चित हैं। देव-संगीत की एक और विशेषता यहां यह है कि देव-संगीत के ज्ञाता अनुसूचित जातियों के लोग हैं, जिनका योगदान देव-वाद्यों के निर्माण से लेकर उन वाद्यों के वादन तक है। यूँ कहें कि वे पूर्णता इन वाद्यों और देव-संगीत के कर्ता-धर्ता हैं तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। यह पहलू कुल्लू जनपद की देव-संस्कृति में अवश्य ही अनछुआ है, क्योंकि समाज का उच्च तबका देव-परम्पराओं को अपने तरीके से आगे ले जाना चाहता है, परन्तु देव-संगीत के बिना यह सम्भव ही नहीं है और इसके लिए अनुसूचति जातियों के उन कलाकारों को साथ ले जाना होगा जो देव-संगीत के विद्वान हैं। इसलिए अनुसूचित जातियों के लोगों के देव-परम्पराओं में योगदान को लोगों के समक्ष लाना होगा।

शोध-प्राविधि एवं अध्ययन क्षेत्र: शोध पत्र में मिश्रित (गुणात्मक एवम मात्रात्मक) एवं केस स्टडी शोध-विधि का प्रयोग किया गया है। साथ ही दत संकलन के लिए साक्षात्कार विधि को भी प्रयोग में लाया गया है। इस शोध पत्र का क्षेत्र हिमाचल प्रदेश का जनपद कुल्लू है

बीज शब्द: कुल्लू जनपद की देव-परम्पराएँ एवं अनुसूचित जातियां।

भूमिका

प्रकृति एक अनुपम कलाकार है, इसने हर वस्तु को विशेष तरीके से ही निर्मित किया है। प्रकृति की हर वस्तु, जिसकी भी बात की जाए, अद्भुत एवं अनुपम दृष्टिगोचर होती है। प्रकृति ने ऊँचे-ऊँचे पहाड़, गहरे समुद्र और खुला आसमान बनाया, जिसके बारे में मात्र कल्पना ही की जा सकती है। अद्भुत वस्तुओं के साथ मनुष्य भी प्रकृति की अनोखी रचना है। मनुष्य को उसने अनेक भाव एवं सोचने की क्षमता से परिपूर्ण किया, परिणामस्वरूप मनुष्य शारीरिक रूप से दुर्बल होने के बावजूद भी सर्वशक्तिमान बना। ऐसा नहीं है कि मनुष्य चंद मिनटों में शक्तिमान बना, बल्कि उसे हज़ारों सालों तक विपरीत परिस्थितियों का सामना भी करना पड़ा। मनुष्य जब आदिम अवस्था में था तो उसका प्रमुख उद्देश्य अपना पेट पालना था। धीरे-धीरे उसकी सोचने की क्षमता में वृद्धि होती गई और उसने अनेक आविष्कार किए, जिनकी उसे समय के साथ आवश्यकता पड़ी। पहिए, शस्त्र, अग्नि आदि की खोज ने उसकी आदिम अवस्था को परिवर्तित किया। सबसे प्रमुख कार्य जो मनुष्य ने किया, वह है समय के अनुसार अपने आप को ढ़ालना। इसी परिवर्तन के कारण आज वह एक सुव्यवस्थित अवस्था में पहुँच चुका है। वह एक सामाजिक प्राणी बन चुका है और समाज में सभी के साथ मिलजुल कर रहता है। मनुष्य यद्यपि सर्वशक्तिमान बना, परन्तु कहीं न कहीं वह सदैव डरता भी रहा है। इसका परिणाम यह हुआ कि उसने प्राकृतिक वस्तुओं को दैवीय रूप में देखना प्रारम्भ किया। उसे जो अद्भुत लगा, उसके बारे में अनेक कल्पनाएं करने लगा। जब मनुष्य व्यवस्थित हुआ तो उसका जीवन सुखमयी बना, परिणामस्वरूप उसने समाज की इस व्यवस्था को बनाए रखने के लिए कुछ नियमों का निर्माण किया। सामाजिक जीवन का कोई भी पहलू मनुष्य ने अधूरा नहीं छोड़ा, उसने सभी के लिए नियमों का निर्माण किया। यही नियम पीढ़ी दर पीढ़ी अनुसरित होते गए और परम्पराओं का निर्माण हुआ। यहीं से परम्पराओं की बात प्रारम्भ होती है। आगामी पीढ़ी अपने पूर्वजों के बनाए नियमों का अनुसरण करना अपना कर्त्तव्य समझती है। यहीं से देव-परम्पराओं की भी बात की जा सकती है। पूर्वजों द्वारा जिन शक्तियों को पूजा जाता था, उन्होंने यह निर्धारित कर दिया था कि किन-किन शक्तियों को किस-किस प्रकार से मानना है या उनकी परम्पराओं का पालन करना है।

भारतवर्ष एक विविध राष्ट्र है, इसका कारण यह है कि यहाँ भौगोलिक भिन्नता इतनी है कि एक देश की परम्पराएं भी कई बार दो देशों की प्रतीत होती हैं। कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी और पश्चिमी कच्छ से लेकर पूर्वोतर राज्य तक फैला यह राष्ट्र इतिहास लिखता हुआ वर्तमान समय तक पहुँचा है। भारत के किसी भी भाग में जाने पर हम पाएंगे कि यहां संस्कृति में कितनी अधिक भिन्नता है और इसे नकारा भी नहीं जा सकता। भारतवर्ष में सभी जगह किसी न किसी आलौकिक शक्ति पर विश्वास किया जाता है, यह बात सभी जगह समान रूप से लागू होती है। साथ ही पूर्वजों द्वारा निर्धारित नियमों के अनुसार ही हर परम्परा का निर्वहन किया जाता है। वह परम्परा चाहे शादी-विवाह की हो या कोई अन्य विधा की, परम्परा का निर्वहन नियमों के अन्तर्गत ही किया जाता है। भारतीय लोगों का धार्मिक जीवन बड़ा ही परम्परावादी है, यहाँ प्रशन नहीं किए जाते, मात्र परम्पराओं के अनुसार ही उसका पीढ़ी दर पीढ़ी अनुसरण होता है। नित्य पूजा-पाठ, धार्मिक स्थलों की यात्रा, व्रत आदि रखना इनमें प्रमुख हैं। इन सभी बातों के लिए किसी पर दबाव नहीं ढाला जाता, परन्तु इन सभी बातों का अनुसरण करना भारतीय लोग अपना परमकर्त्तव्य समझते हैं। वैसे भी भारतवर्ष अपने धार्मिक विश्वासों के कारण ही दुनिया भर में प्रसिद्ध है।

जनपद कुल्लू की देव-परम्परा

हिमाचल प्रदेश को देव-भूमि के नाम से जाना जाता है। इसके पीछे कारण यह है कि यहाँ देवताओं की संख्या भारतवर्ष के दूसरे भागों से कहीं अधिक है, साथ ही इन देवी-देवताओं पर अत्यधिक विश्वास किया जाता है। देवता लोगों के संगी-साथी हैं, वे देवताओं के साथ मित्रवत व्यवहार करते हैं और अच्छे भविष्य की कामना करते हैं। हिमाचल प्रदेश के कुल्लू जनपद में भी इन्हीं बातों का अनुसरण होता है। यहाँ देव-परम्पराएं लोगों के दैनिक जीवन जैसी हैं। यहाँ प्रत्येक घर में गृह देवता, कुल देवता, गाँव का ग्राम देवता और बड़े क्षेत्र का क्षेत्रिय देवता है। देव-परम्पराएं यहाँ के सामाजिक जीवन पर अमिट छाप छोड़ती हैं। देवताओं के उत्सव यहाँ हर महीने देखने को मिलते हैं। लोगों का जीवन साधारण है और वह देव-परम्पराओं से अत्यधिक प्रभावित है। देव-परम्पराओं को इतनी अधिक वरीयता यहाँ दी जाती है कि किसी भी कार्य को करने से पूर्व देवता की अनुमति लेना अनिवार्य होता है।

देव-परम्पराओं में संगीत

देव-परम्पराएं जनपद कुल्लू की प्रमुख पहचान तो हैं ही, परन्तु संगीत की दृष्टि से इनकी और भी अधिक महत्त्वता है, क्योंकि देवता सदैव संगीतमयी ध्वनियों से घिरे रहते हैं। वे संगीत के बिना एक भी कदम आगे नहीं बढ़ाते। देवता के साथ ढोल, नगाड़े, करनाल, नरसींगे, शहनाई, बाम, कणसी, भाणा, काहल, डफाल आदि अनेक लोक वाद्यों का वादन किया जाता है। देवता की हर स्थिति के लिए विशेष तालों का वादन ढोल नगाड़ों पर, विशेष ध्वनियों का वादन शहनाई, करनाल, नरसींगे आदि वाद्यों पर किया जाता है। यह बात आश्चर्यजनक ही है कि लोक संगीत को नियमबद्ध नहीं समझा जाता है और उसे मात्र लोकरंजन की वस्तु ही माना जाता है, परन्तु कुल्लू जनपद के देव-संगीत में यह बात लागू नहीं होती। यहाँ देव-परम्पराएं पूर्णतः नियमबद्ध हैं और उनका पालन परम्परागत तरीके से ही किया जाता है, वह चाहे वाद्य वादन हो या कोई अन्य विधा। नियमों का उल्लंघन यहाँ किसी भी रूप में नहीं किया जाता है। देव-परम्पराओं का इतिहास समृद्ध रहा होगा, क्योंकि हमें यहाँ इस प्रकार के देवता भी देखने को मिलते हैं जिनका सम्बन्ध भारतवर्ष के प्राचीनकाल से रहा है। माता हिड़िम्बा, देवता घटोतकच्छ, देवता नारदमुनि, आदिब्रह्मा, नारायण, गणेष, नाग आदि अनेक देवता यहाँ वर्तमान समय में पूजे जाते हैं। सभी देवताओं के नियम अलग-अलग हैं और उनकी उत्पति की भी भिन्न-भिन्न कहानियाँ हैं, लेकिन एक बात यहाँ समान रूप से लागू होती है कि सभी देवताओं के साथ लोक-वाद्यों एवं देव-वाद्यों का वादन करना अनिवार्य है।

अनुसूचित जातियों का योगदान (अनछुआ पहलू)

कुल्लू जनपद की देव-परम्पराओं में देव-वाद्यों का महत्त्व इतना है कि यदि इनकी उपस्थिति देव-परम्पराओं से निकाली जाए तो देवता खामोश हो जाएंगे। यह बात मात्र कहने की नहीं है कि देव-वाद्यों का महत्त्व देव-परम्पराओं में है, यह महत्त्व इतना है कि देवता की सम्पूर्ण शक्ति देव-तालों में निहित होती है। वे तालों के अनुसार ही अपनी शक्ति का प्रदर्शन करते हैं। यह बात जनपद कुल्लू के देव-संगीत में सर्वमान्य है कि देव-संगीत पर अनुसूचित जाति वर्ग का एकाधिकार है। देव-परम्पराओं का यह पहलू अनछूआ सा प्रतीत होता है। देव-परम्पराओं में देवता के साथ-साथ उन देव-अधिकारियों को महत्त्व दिया जाता है जो देवता की प्रबन्धक समीतियों के सदस्य होते हैं, परन्तु कहीं न कहीं यह बात छुप जाती है कि अनुसूचित जातियों के लोग भी देव-परम्पराओं में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। देवताओं के संगीत के विशेषज्ञ निम्न जाति वर्ग से ही सम्बन्ध रखते हैं। वाद्य निर्माण की बात हो या वाद्य वादन की, अनुसूचित जातियों के लोग ही वर्चस्व रखते हैं।

देवता की प्रत्येक स्थिति के लिए विशेष प्रकार के तालों का वादन इन्हीं लोगों द्वारा किया जाता है। ढोल, करनाल, शहनाई, बाम, नरसींगा, काहल, गुजू, भाणा, कणसी, छंछाला, ढफाल, ढाढ आदि अनेक वाद्यों के वादन में तो अनुसूचित जातियों के लोग प्रवीण हैं ही साथ ही वे इनके निर्माण कार्य में भी दक्ष हैं। देवता के प्रमुख ताल का वादन तब किया जाता है जब देवता का प्रवेश देवता के प्रतिनिधि (गूर) में करवाया जाता है। अनुसूचित जातियों के लोगों की ही यह विशेष रचना है कि उस समय देवता के लिए रौद्र ताल का वादन किया जाता है। देवता जब शांत एक जगह बिठा दिया जाता है तो वाद्यों पर तालों का वादन ये लोग इस प्रकार करते हैं मानों पानी शांत भाव से आगे बढ़ रहा हो। आम जनमानस के लिए इन वाद्यों का वादन एक कान से सुनना और दूसरे कान से निकालने जैसा है, क्योंकि उनका सम्पूर्ण ध्यान देवता और उसकी गतिविधियों पर होता है, परन्तु यदि वाद्य कलाकार से यह पूछा जाए कि उसका ध्यान कहाँ था? तो इसका उत्तर हमें सुनने को मिलेगा कि उसका पूरा ध्यान अपने वाद्य पर था और वह इस बात का विशेष ध्यान रख रहा था कि इसका वादन परम्परागत एवं मधुर हो। वह चाहे ढोल-नगाड़े का वादन हो या किसी अन्य वाद्य का। वे सच्ची निष्ठा एवं लगन से वे देव-परम्परा के संगीत का पालन करते हैं।

देव-परम्परा के निम्न जाति वर्ग के कलाकारों का महत्त्व केवल इतना नहीं है कि वे मात्र वाद्यों का ही वादन करते हैं। ध्यान देने वाली बात यह भी है कि देवता के हर ताल के वादन के समय इस बात का विषेश ध्यान रखा जाता है कि उसका स्वरूप परम्परावादी ही रहे। देव-तालों में अपनी स्वयं रचित रचना का वादन करना निषेध होता है और ये लोग इस बात को भली-भान्ति जानते हैं और इस बात का विशेष ध्यान रखते हैं कि हर ताल का स्वरूप वही रहे जैसा उन्होंने अपने पूर्वजों से सीखा है। जनपद में इस प्रकार के तालों की विशेष शिक्षा नहीं दी जाती है, बल्कि परम्परागत रूप से कलाकार अपने घर में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक इस कला को पहुँचाते हैं। उनसे पूछने पर हम पाते हैं कि उन्होंने सम्पूर्ण जीवन को देवता की सेवा के लिए ही समर्पित कर दिया है। इसके अतिरिक्त वे अपना भविष्य कहीं और नहीं देखते। देव-वाद्यों के निर्माण की भी जो प्रक्रिया है, सभी प्रक्रियाओं में अनुसूचित जातियों के लोगों का ही हाथ होता है। सर्वप्रथम जब वाद्य के खोल का निर्माण करना हो तो लोहार जाति के लोग इस कार्य में योगदान देते हैं, इसके पश्चात् जब खोल पर चमड़ा मढ़ा जाता है तो चर्मकार वर्ग इसमें प्रमुख भूमिका निभाता है। जब वाद्य वादन के लिए तैयार हो जाता है तो हरिजन वर्ग के अधिकतर कलाकार होते हैं जो इनके वादन में दक्ष होते हैं। कई बार जनपद में ऐसा भी देखा गया है कि वाद्य निर्माता ही वादक होता है। इसके पीछे कारण होता है कि वाद्य निर्माता एक संगीत का अच्छा-खासा ज्ञाता होता है और इसकी खास आवश्यकता भी होती है, क्योंकि एक अच्छा वाद्य तभी बन सकता है जब संगीत की जानकारी किसी व्यक्ति में हो। अनुसूचित जाति वर्ग में इस प्रकार के सैंकड़ों लोग जनपद में पाए जाते हैं जो इस प्रकार की कला में प्रवीण हैं। यहाँ ध्यान देने वाली बात है कि स्वर्ण जाति वर्ग से एक भी कलाकार नहीं होगा जिसे वाद्य निर्माण करना आता हो। निर्माण तो बहुत दूर की बात है, यहाँ तक कि देव-संगीत के वादन में भी वह कतराएगा।

देव-संगीत ही नहीं बल्कि समाज के दूसरे कई कार्यों को भी अनुसूचित जाति वर्ग के लोग ही करते हैं। विषेशकर जब किसी एक देवता का सन्देश दूसरे देवता तक पहुँचाना हो, तो अनुसूचित जाति वर्ग का चुनिन्दा व्यक्ति ही यह कार्य करता है। जब देवता का कोई विशेष कार्यक्रम हो या विक्रमी सम्वत् के अनुसार महीने का पहला दिन, लोगों को बाम वाद्य द्वारा इसकी जानकारी अनुसूचित जाति के किसी विशेष व्यक्ति द्वारा ही दी जाती है। देवता के कार्यक्रम में लोगों की सेवा करने का कार्य भी अनुसूचित जातियों के लोग ही करते हैं। जिस प्रकार का सेवा भाव इस वर्ग में पाया जाता है शायद ही दूसरे वर्ग में इस प्रकार का भाव पाया जाता हो। देव-परम्पराओं के इस प्रकार के निर्वहन के लिए उन्हें उचित मानदेय नहीं दिया जाता बल्कि अनाज देकर उच्च वर्ग द्वारा उनसे छुटकारा पाया जाता है।

कुल्लू जनपद के देव-संगीत के लिए यह बात अच्छी है कि यहाँ इस प्रकार के लोग पाए जाते हैं, जो पूर्णतः देवताओं की सेवा में ही संगीत का परम्परागत रूप से निर्वहन करते हैं। साथ ही वे लोग इस कला को अपने तक सीमित नहीं रखते, बल्कि आगामी पीढ़ी तक इस कला को पहुँचाने का प्रयत्न भी करते हैं। वे अपने घरानों के साथ-साथ समाज में दूसरे कलाकारों को भी सीखाते हैं कि वादन का उचित तरीका किस प्रकार का होना चाहिए। कुल्लू जनपद में सिद्ध कलाकार लगभग हर देवता के पास पाए जाते हैं जो दूसरे युवा कलाकारों को राह दिखाने का कार्य करते हैं। कई बार वयोवृद्ध कलाकारों को यह शिकायत भी रहती है कि युवा कलाकार इसकी ओर ध्यान नहीं देते और वे आधुनिकता की चकाचौंध में कहीं खो गए हैं, परन्तु फिर भी वे युवा कलाकारों का मार्ग प्रशस्त करना नहीं भूलते और लगातार प्रयासरत रहते हैं कि वे देव-संगीत को ही अपना जीवन मान लें। कितनी अजीब बात है कि अनुसूचित जातियों में इस प्रकार की भावना देव-परम्पराओं के लिए है और वे इसे निरन्तर बनाए रखना चाहते हैं, जबकि समाज के आमजनमानस के लिए देव-संगीत की परम्पराएं मनोरंजन की वस्तु से अधिक कुछ नहीं है। आमजनमानस की दृष्टि में देव-संगीत एक उपहास से अधिक कुछ नहीं है, जबकि अनुसूचित जातियों के उन कलाकारों के लिए यह जीवन है और वे इसके संरक्षण में दिन-रात एक कर देते हैं। यह भी देखा गया है कि जनपद कुल्लू के देव-उत्सवों में आमजनमानस अपनी इच्छानुसार ही शामिल होता है, परन्तु अनुसूचित जातियों के कलाकार देवता के हर छोटे-बड़े उत्सव में सदैव उपस्थित रहते हैं। यह इस बात को प्रदर्शित करता है ये लोग सच्ची निष्ठा के धनी हैं।

निष्कर्ष

परिवर्तन के इस दौर में कहीं न कहीं अनुसूचित जातियों के कलाकारों ने यद्यपि कुल्लू जनपद की देव-सांगीतिक परम्परा को जीवित रखा है और भविष्य में भी ऐसी आशा की जा सकती है, परन्तु परिवर्तनों से वे लोग भी अछूते नहीं हैं। ऐसा स्वाभाविक भी है क्योंकि आधुनिक आवश्कताओं की पूर्ति थोड़े से अनाज से सम्भव नहीं है, जो उन्हें देव-संगीत के निर्वहन के पश्चात् मिलता है। वर्तमान परिस्थितियों में परिवर्तन आए हैं, इसलिए अनुसूचित जातियों के कलाकारों ने भी आधुनिकता को अपनाते हुए देव-संगीत से ध्यान हटाकर अपना ध्यान समयानुसार लोकसंगीत की ओर किया है। इससे उनकी आर्थिक स्थिति में सम्पन्नता आई है। इस प्रकार का रूझान विशेषकर युवा कलाकारों में देखा जा सकता है। आधुनिक संगीत का प्रभाव भी हमें स्पष्ट देखने को मिलता है, जब यही युवा कलाकार देव-संगीत का वादन करते हैं उस समय ये कलाकार अपनी ऊपज का प्रयोग परम्परागत देव-संगीत में करने का प्रयत्न करते हैं, जो देव-संगीत की परम्परागता के लिए खतरे का संकेत अवश्य है, इसलिए देव-संगीत का वर्णन करना वर्तमान में आवश्यक हो गया है ताकि देव-संगीत के परम्परागत स्वरूप का लिखित इतिहास रहे। देव-संगीत में समय के साथ परिवर्तन अवश्य होंगे, इसलिए भी यह महत्त्वपूर्ण हो जाता है कि परम्परागत संगीत की सही जानकारी आगामी पीढ़ी तक पहुँचे। सबसे प्रमुख उद्देश्य यह है कि समाज के आमजनमानस को देव-संगीत और लोक-संगीत में अन्तर नहीं लगता, उन्हें इस अन्तर से जानकारी मिले और समाज का वह वर्ग जो देव-संगीत का ज्ञाता है, उससे सभी परिचित हों। विशेषकर अनुसूचित जातियों के वे प्रसुप्त कलाकार जो कभी सामने आए ही नहीं। साथ ही वर्तमान समय में परम्पराओं को साथ ले जाने वाले कलाकार, जो वर्तमान

समय में कुल्लू जनपद की देव-परम्पराओं में बचे हैं उनका महत्त्व भी लोगों तक पहुँचे। इस बात का एहसास लोगों को करवाना अनिवार्य है कि समाज में जिन लोगों को अछूत समझा जाता है, यदि उन लोगों ने गलती से भी देव-संगीत का निवर्हन करना बन्द कर दिया तो शायद ही देवता-परम्परा आगे बढ़ पाएगी। देवता संगीत के साथ उठते-बैठते, नाचते-खेलते, मिलते-बिछुड़ते हैं, इसलिए यदि संगीत की उपस्थिति इन अवसरों पर नहीं होगी तो देव-परम्पराएं नीरस हो जाएगी। अनुसूचित जातियों के इन महान् परम्परावादी कलाकारों का महत्त्व अत्यधिक है और यदि उनकी उपस्थिति देव-परम्परा के संगीत में नहीं होगी तो शायद ही विश्वप्रसिद परम्परा आगे बढ़ पाएगी। परिवर्तन के दौर और समृद्ध परम्पराओं की जानकारी लिखित रूप में आगामी पीढ़ी को पहुँचाना आवश्यक है ताकि वे इनका महत्त्व समझें और अपने अतीत पर गर्व महसूस कर सके।

सन्दर्भ

१. कश्यप, डा0 पदम चन्द्र: हिमाचली संस्कृति का इतिहास, आर्य प्रकाशन, दिल्ली, 1986।
२. ठाकुर, डा0 सूरत: हिमाचल के लोकवाद्य, अभिषेक पब्लिकेशन्ज़, चंडीगढ़, प्रथम संस्करण 1996।
३. ठाकुर, डा0 सूरत: हिमाचल की देव संस्कृति, मंदिर, मेले व त्यौहार, एच0जी0 पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
४. वशिष्ठ, सुदर्शन : हिमालय में देव संस्कृति, पुष्पांजली प्रकाशन, दिल्ली।
५. वशिष्ठ, सुदर्शन : देव परंपरा: सुहानी बुक्स, दिल्ली- 110092।

साक्षात्कार

श्री सूरत राम गाँव शेलापाणी, डा0 पुजाली, त0 बन्जार, जनपद कुल्लू, हि0 प्र0, दिनांक 13.06.2015।
२. श्री चन्दे राम, गाँव चलाऊड़ी, डा0 पुजाली, त0 बन्जार, जनपद कुल्लू, हि0 प्र0, दिनांक 24.10.2015।
३. श्री डमोदर, गाँव चलाऊड़ी, डा0 पुजाली, त0 बन्जार, जनपद कुल्लू, हि0 प्र0, दिनांक 24.10.2015।
४. श्री भोला दत्त, गाँव चलाऊड़ी, डा0 पुजाली, त0 बन्जार, जनपद कुल्लू, हि0 प्र0, दिनांक 24.10.2015।
५. श्री वीरभद्र सिंह, गाँव चलाऊड़ी, डा0 पुजाली, त0 बन्जार, जनपद कुल्लू, हि0 प्र0, दिनांक 24.10.2015।
६. श्री चुनी लाल, गाँव बेंची, डाकघर कटराई; तहसील एवं जिला कुल्लू, हि0प्र0, दिनांक 24.12.2013।
७. श्री दिनेश कुमार, गाँव एवं डाकघर नगर, तहसील एवं जिला कुल्लू, हि0प्र0, दिनांक 24.12.2013।